द्वितीय अध्याय
वैदिक साहित्य
(2000 ई० पू० से 800 ई० पू०)

शब्द–रचना की दृष्टि से 'वेद' शब्द ज्ञान का सूचक है, परन्तु इसका प्रयोग उस ज्ञानराशि अथवा शब्दराशि के लिए हुआ है, जिसे हमारे ऋषि–महर्षियों ने अपनी तपस्या द्वारा साक्षात् ग्रहण किया है। ये वेद नित्य एवं अपौरुषेय कहे गये हैं, जिनकी प्रामाणिकता स्वतःसिद्ध है।

'वेद' शब्द की व्युत्पत्ति अनेक प्रकार से बतायी गयी है जो भिन्न–भिन्न अर्थों का द्योतक है : –

1. अदादिगणीय 'विद ज्ञाने' धातु से करण में 'घञ्' के योग से वेद का अर्थ निष्पादित होता है– *'वेत्ति जानाति धर्मादि–पुरुषार्थचतुष्टयोपायान् अनेन इति वेदः।'* अर्थात् जिसके द्वारा धर्म, अर्थ, काम एवं मोक्ष–पुरुषार्थ चतुष्टय को प्राप्त करते हैं, उसे वेद कहा जाता है।
2. दिवादिगणीय 'विद सत्तायाम्' धातु से भाव में ' घञ्' प्रत्यय के योग से वेद अपने सनातन सत्–रूप को बताता है।
3. 'विद विचारणे' धातु से करण अर्थ में 'घञ्', प्रत्यय के योग से निष्पन्न 'वेद' शब्द सृष्टि–प्रक्रिया विचार रूप अर्थ को व्यक्त करता है। *(विन्ते विचारयति सृष्ट्यादिप्रक्रियाम् अनेन इति वेदः)।*

उपर्युक्त प्रकार से 'वेद' के अनेक अर्थ बताये गये हैं। ये

वेद आधिदैविक, आधिभौतिक एवं आध्यात्मिक इन त्रिविध अर्थों के प्रतिपादक, ज्ञान–विज्ञान, सृष्टि–प्रक्रिया के स्रोत एवं भारतीय ऋषियों–मनीषियों के प्रत्यक्ष ज्ञान के महान् आदर्श हैं।

संहिताएँ

जिसके द्वारा देवताओं की स्तुति की जाती है, वह ऋक् (ऋचा या मन्त्र) कहलाता है– ''ऋच्यन्ते स्तूयन्ते देवा अनया इति ऋक्'' ऐसी ऋचाओं या मन्त्रों (मननात् मन्त्राः) के समूह का ही नाम संहिता है। संहिताएँ चार हैं– ऋक्, यजुः, साम एवं अथर्व। इन्हीं संहिताओं को वेद नाम से भी जाना जाता है। इसलिए वेद चार हैं– ***ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद तथा अथर्ववेद।***

'ऋक्' संज्ञा का प्रयोग सुनिश्चित अक्षर–संख्या, पाद तथा विराम वाले पद्यात्मक मंत्रों के लिए हुआ है। जिन मंत्रों में छन्द के नियमानुसार अक्षर–संख्या , पाद तथा विराम ऋषिदृष्ट नहीं हैं, वे गद्यात्मक मंत्र 'यजुः' कहलाते हैं और जो मंत्र गेय हैं, वे 'साम' कहलाते हैं। उन तीन प्रकार की शब्द–प्रकाशन–शैलियों के आधार पर ही 'वेद' के लिए 'त्रयी' शब्द का भी व्यवहार किया जाता है।

प्रत्येक वेद का अपना प्रतिपाद्य विषय है। ऋक् का प्रतिपाद्य विषय है – 'शस्त्र', जो मंत्रों द्वारा उच्चरित होता है तथा जिसका गान नहीं होता। 'यजुस्' का प्रतिपाद्य है यज्ञ–कर्म अर्थात् ' इज्या'। 'साम' का विषय है–

स्तुति या स्तोम जो उद्‌गाता द्वारा गाया जाता है। अथर्व का विषय है– 'प्रायश्चित्त' अर्थात् 'ब्रह्मकर्म' (ब्रह्मा नामक ऋत्विक् का कर्म)। वस्तुतः चारों संहिताओं का विभाजन ऋत्विजों (यज्ञ कराने वालों) के कार्यों को ध्यान में रखकर किया गया था। ये चार ऋत्विज् थे– ***होता, अध्वर्यु, उद्‌गाता और ब्रह्मा। होता*** यज्ञ में देवताओं का आह्वान करता था और ऋचाओं का पाठ करते हुए देव–यज्ञों की स्तुति करता था । होता के उपयोगी मन्त्रों का संग्रह ***ऋग्वेद संहिता*** में है। यज्ञ का विधि–विधान द्वारा सम्पादन ***अध्वर्यु*** करता था। इसके लिए आवश्यक मंत्रों को यजुर्वेद में संकलित किया गया है। ऋचाओं का सस्वर गान कर देवताओं को प्रसन्न करने के लिए ऋग्वेद के अनेक मंत्रों का संकलन ***सामवेद संहिता*** में किया गया। यह सस्वर गान ***उद्‌गाता*** द्वारा किया जाता था। ***ब्रह्मा*** चतुर्वेदी अर्थात सभी वेदों का ज्ञाता था , जो यज्ञ का निरीक्षक था तथा उसे अथर्ववेद में विशिष्टता प्राप्त थी।

ऋग्वेद संहिता

ऋग्वेद संहिता विश्व साहित्य का सर्वप्राचीन ग्रन्थ होने के साथ ही भाषावैज्ञानिक सिद्धान्तों का भी आधारभूत ग्रन्थ है, जिसमें विश्व के प्राचीनतम इतिहास, संस्कृति, सभ्यता, भौगोलिक स्वरूप तथा भाषा–शैली का एक मात्र लिपिबद्ध अभिलेख है। यह आर्यों के धार्मिक एवं दार्शनिक विचारों की

प्रथम अभिव्यक्ति है। ऋग्वेद में इन्द्र एवं अग्नि को प्रमुखता देते हुए 33 देवताओं की स्तुतियाँ की गयी हैं। इन स्तुतियों के अतिरिक्त इसमें 20 संवाद–सूक्त हैं जिनमें सरमा–पणि, यम–यमी, पुरूरवा–उर्वशी तथा विश्वामित्र–नदी संवाद सूक्त बहुत महत्त्वपूर्ण है, जो नाटकों एवं महाकाव्यों के बीज –स्वरूप हैं।

ऋग्वेद का विभाजन 10 मण्डलों में हुआ है। प्रत्येक मण्डल में अनेक सूक्त हैं। मंत्रों के समूह को सूक्त कहते हैं जो किसी विषय–वस्तु या देवता–विशेष से संबद्ध होते हैं। मण्डलों का विभाजन ऋषि या ऋषि–कुल पर आधारित है। किसी ऋषि या उनके परिवार में पठित ऋचाओं का संग्रह ही मण्डलों में हुआ है। कई मन्त्रों की उद्‌भावना ऋषिकाओं द्वारा हुई है जिनमें लोपामुद्रा, अपाला, रोमशा आदि प्रमुख हैं। ऋग्वेद में सूक्तों की संख्या 1028 है जिनमें ऋचाओं की कुल संख्या 10580 है। ऋग्वेद के प्रथम एवं दशम मण्डल परवर्ती माने गये हैं । सबसे प्राचीन मण्डल सप्तम मण्डल को माना गया है। नवम मण्डल सोम को समर्पित है।

ऋग्वेद की इक्कीस शाखाओं में शाकल, वाष्कल, आश्वलायन, शांखायन तथा माण्डूकायन नामक पाँच शाखाएँ प्रसिद्ध हैं, किन्तु शाकल के अतिरिक्त किसी शाखा की संहिता उपलब्ध नहीं हैं ।

विषयों की विविधता के कारण अन्य वेदों की अपेक्षा ऋग्वेद की महत्ता सर्वाधिक है। विषय–वस्तु की दृष्टि से इसके समस्त सूक्तों को तीन वर्गों में रखा जाता है – 1. धार्मिक –सूक्त, 2 लौकिक सूक्त तथा 3. दार्शनिक सूक्त। ऋग्वेद में ऋषियों ने ईश्वर को जगत् का नियन्ता बताया है। ईश्वर को ही पुरुष और हिरण्यगर्भ कहा गया है। हिरण्यगर्भ सूक्त में कहा गया है–

ऊँ हिरण्यगर्भः समवर्तताग्रे भूतस्य जातः पतिरेक आसीत्।

स दाधार पृथिवीं द्यामुतेमां कस्मै देवाय हविषा विधेम।।

अर्थात् सृष्टि के प्रारम्भ में हिरण्यगर्भ ही उत्पन्न हुआ, जो स्वर्ग, पृथ्वी सभी को धारण करते हुए समस्त चराचर का स्वामी बन गया। इस वेद में अनेक ऐसे सूक्त हैं जो लौकिक सुखों यथा शारीरिक, मानसिक, बौद्धिक तथा आर्थिक समृद्धियों की कामना पूर्ति हेतु हैं। नासदीय सूक्त जहाँ सृष्टि की रहस्यमयता को प्रकट करता है तो पुरुष–सूक्त सृष्टि–प्रक्रिया को बताता है।

ऋग्वेद की ऐतिहासिक एवं सांस्कृतिक महत्ता है क्योंकि यह आर्यों की संस्कृति का प्रारम्भिक स्रोत है, जिसमें संस्कार, यज्ञ एवं आर्यों के दार्शनिक दृष्टिकोण दृष्टिगत होते हैं। साथ ही, आर्यों एवं दासों की जीवन–शैली का चित्रण है। वेद की उपयोगिता अनेक ग्रन्थों के उद्‌गम स्रोत के रूप में है। यथा–नाटकों का उद्‌भव संवाद–सूक्तों से हुआ है।

ऋग्वैदिक सूक्तों को परवर्ती गीतिकाव्य तथा विभिन्न छन्द–प्रयोगों का उद्गम माना जाता है।

यजुर्वेद संहिता

यजुषों का संग्रह यजुर्वेद है। यजुस् का अर्थ है– जिसमें अक्षरों की संख्या नियत न हो *"अनियताक्षरावसानं यजुः"*। यजुर्वेद गद्यात्मक है–*गद्यात्मकं यजुः* .किन्तु कुछ मंत्र पद्यात्मक भी हैं। कर्मकाण्डों में यजुर्वेद का बहुलता से प्रयोग होता है। यजुर्वेद के आचार्य, वेदव्यास के शिष्य वैशम्पायन हैं। यजुर्वेद की अनेक शाखाओं का पता चलता है जिसमें तैत्तिरीय, मैत्रायणी, कठ एवं कपिष्ठल ये चार *कृष्ण यजुर्वेद* तथा वाजसनेयी एवं काण्व ये दो *शुक्ल यजुर्वेद* की शाखाएँ हैं। शुक्ल यजुर्वेद की *वाजसनेयी संहिता* को ही लोग मौलिक मानते हैं।

सम्पूर्ण वाजसनेयी' संहिता 40 अध्यायों 303 अनुवाकों तथा 1975 मन्त्रों में विभक्त है। यजुर्वेद में ' राजसूय यज्ञ' , 'वाजपेय यज्ञ', 'वेदी निर्माण विधि', अश्वमेध', 'पुरुषमेध', शिवसंकल्पसूक्त अग्निहोत्र' जैसे विषयों को पृथक्–पृथक् अध्यायों में रखा गया है। इस संहिता के अन्त में चालीसवें अध्याय को *'ईशावास्योपनिषद'* कहते हैं। यही एक मात्र ऐसी प्राचीनतम उपनिषद है, जो संहिता का भाग है।

सामवेद–संहिता

'साम' का अर्थ है–'देवों को प्रसन्न करनेवाला गान' *(सा च अमश्चेति तत्साम्नः सामत्वम्। सा ऋक्। तया सह सम्बन्धः अमो नाम स्वरो यत्र वर्तते तत्साम।–बृहदा0)*। सामवेद की तीन प्रमुख शाखाएँ हैं–1 '*राणायणीय*' दक्षिण भारत में प्रचलित है, 2. ***कौथुमीय*** समस्त उत्तर भारत एवं 3. ***जैमिनीय*** केरल प्रान्त में प्रयुक्त है। सामवेद में 75 मन्त्रों को छोड़कर शेष सभी मंत्र ऋग्वेद की शाकल संहिता के हैं।

सामवेद का देवता सूर्य एवं ऋत्विक् उद्गाता है, जो सामगानों का पाठ यज्ञों में करता है। सामवेद संहिता के दो प्रमुख विभाग हैं– 1. पूर्वार्चिक तथा 2. उत्तरार्चिक। आर्चिक का अर्थ ऋचाओं का संग्रह है। पूर्वार्चिक में छः प्रपाठक हैं, तथा उत्तरार्चिक में नौ। इन प्रपाठकों को अध्यायों एवं खण्डों में विभाजित किया गया है। प्रत्येक खण्ड में एक देवता एवं एक छन्द में आबद्ध ऋचाएँ हैं।

भारतीय संगीत का उद्भव सामवेद से माना गया है। पूर्वार्चिक में चार प्रकार के गान हैं–1. ग्राम गान, 2. आरण्यगान, 3. ऊहगान, 4. ऊह्य (रहस्य) गान। उत्तरार्चिक को विभिन्न अनुष्ठानों या यज्ञों के आधार पर क्रमबद्ध किया गया है। उत्तरार्चिक मन्त्रों का कण्ठस्थ गायन विभिन्न याज्ञिक अवसरों के अनुसार किया जाता था। उत्तरार्चिक में 400 स्तोत्रों का संकलन

है। इसमें 1225 मन्त्र हैं, जबकि पूर्वार्चिक में 650 ऋचाएँ हैं। पूर्वार्चिक की अनेक ऋचाएँ उत्तरार्चिक में हैं। ऋग्वेद की 1507 ऋचाएँ सामवेद में प्राप्त होती हैं।

अथर्ववेद संहिता

अथर्ववेद के द्रष्टा अंगिरा–वंशीय अथर्वा ऋषि थे। उन्हीं के नाम से यह संहिता अथर्ववेद कहलायी। अथर्ववेद को ***ब्रह्मवेद, क्षत्रवेद, भिषग्वेद*** या ***भृग्वंगिरोवेद*** के नाम से भी जाना जाता है। इस वेद के देवता सोम एवं प्रमुख आचार्य सुमन्तु हैं। अथर्ववेद की नौ शाखाओं में ***पैप्पलाद*** एवं ***शौनकीय*** मात्र दो शाखाएँ ही प्राप्त होती हैं। सम्पूर्ण अथर्ववेद में कुल 20 काण्ड, 34 प्रपाठक, 111 अनुवाक् 739 सूक्त तथा 5849 मंत्र हैं, उसमें 1200 मंत्र ऋग्वेद के हैं ।

अथर्ववेद ऐहिक उद्देश्यों की पूर्त्ति के लिए है – " ***अङ्गेषु गात्रेषु यो रसः सप्तधातुमयः , तमधिकृत्य या चिकित्सा साङ्गिरसानां चिकित्सा।***" अर्थात् शरीर में जो सप्त धातुमय रस है, उनकी चिकित्सा जिसमें है, वह आङ्गिरस वेद है। इस संहिता के प्रारम्भिक 13 काण्डों का विषय मारण, उच्चाटनादि से संबंधित है। तदनन्तर विवाह, श्राद्ध, सोमयाग, राष्ट्रवृद्धि एवं अध्यात्मपरक सूक्त हैं।

अर्थववेद वैदिक वाङ्मय का शिरोमणि है क्योंकि व्यावहारिक उपयोगिता की दृष्टि से भावात्मक प्रेरणा, मनन–चिन्तन, कर्त्तव्योपदेश, सदाचार एवं नीतिपरक उपदेशों का यह विशाल भंडार है। सामाजिक एवं सांस्कृतिक दृष्टि से इसमें उच्च, निम्न एवं मध्य इन तीन स्तरों का स्पष्ट स्वरूप परिलक्षित होता है। इसमें अर्थशास्त्र, धर्मशास्त्र एवं ज्ञान–विज्ञान का भी भंडार है।

ब्राह्मण–ग्रन्थ

वैदिक मन्त्रों की व्याख्या ब्राह्मण ग्रन्थों में की गयी है। वैदिक कर्म–काण्ड की व्याख्या एवं विकास इन्हीं ग्रन्थों से हुआ है। 'विधि' को ब्राह्मणों का मुख्य प्रतिपाद्य माना जाता है। शाबर–भाष्य में ब्राह्मणों के प्रतिपाद्य विषय के रूप में विधि के अङ्गभूत कुल 10 वस्तुओं का उल्लेख किया गया है:–

हेतुर्निर्वचनं निन्दा प्रशंसा संशयो विधिः।
परक्रिया पुराकल्पो व्यवधारणकल्पना।
उपमानं दशैते स्युः विधयो ब्राह्मणस्य तु ।।

परन्तु इसमें विधि, विनियोग , हेतु , अर्थवाद, निरुक्ति तथा आख्यान की ही प्रधानता है। 'विधि' में यज्ञ विधानों की चर्चा है। '*विनियोग*' मंत्रों के प्रयोग से सम्बद्ध है। 'हेतु' का अभिप्राय कर्मकाण्ड की विशेष विधि को

स्पष्ट करना है। *'अर्थवाद'* में यागनिषिद्ध की निन्दा तथा यागोपयोगी वस्तुओं की प्रशंसा की जाती है। *'निरुक्त'* के अन्तर्गत ब्राह्मण–ग्रन्थों में यत्र–तत्र किए गए शब्दों के निर्वचन हैं तथा *'आख्यानों'* का समायोजन विषय को सरस एवं रोचक बनाता है।

ऋग्वेद के ब्राह्मणों में ***ऐतरेय*** एवं ***कौषीतकि*** का नाम लिया जाता है। ऐतरेय में मुख्य रूप से सोम–याग में हौत्र कर्म की व्याख्या की गयी है। कौषीतकि ब्राह्मण को *'शाङ्खायन ब्राह्मण'* भी कहा जाता है।

शुक्ल यजुर्वेद से सम्बद्ध *'शतपथ ब्राह्मण'* सुप्रसिद्ध है। यह 100 अध्यायों में संकलित यागानुष्ठान का प्रतिपादक सर्वोत्तम एवं विपुलकाय ग्रन्थ है। यह ग्रन्थ माध्यन्दिन तथा काण्व दोनों शाखाओं में उपलब्ध है। शतपथ का अर्थ है सौ अध्यायों (पथ) वाला – *शतं पन्थानो यस्य तच्छतपथम्।* ' *तैत्तिरीयब्राह्मण* ' कृष्ण यजुर्वेद का पूर्ण रूप से उपलब्ध एकमात्र ब्राह्मणग्रन्थ है। इस ब्राह्मण में अग्न्याधान, बाजपेय, राजसूय, अग्निहोत्र आदि यागों का निरूपण किया गया है तथा भरद्वाज, नचिकेता, प्रह्लाद और अगस्त्य–विषयक प्रख्यात आख्यायिकाएँ हैं।

सामवेदीय ब्राह्मणों में ताण्ड्यब्राह्मण , षड्विंशब्राह्मण, सामविधान ब्राह्मण, आर्षेयब्राह्मण , देवताध्याय ब्राह्मण (दैवतब्राह्मण), छान्दोग्य ब्राह्मण, संहितोपनिषद् ब्राह्मण, वंश ब्राह्मण तथा जैमिनीय ब्राह्मण मुख्य हैं। जैमिनीय ब्राह्मण वैज्ञानिक दृष्टिकोण से उत्कृष्ट है।

अथर्ववेद का एक मात्र ब्राह्मण ग्रन्थ ***'गोपथ'*** है। इसके द्रष्टा पैप्पलाद शाखा के ऋषि 'गोपथ' है। यह ब्राह्मण पूर्वगोपथ एवं उत्तर गोपथ दो भागों में विभक्त है। अथर्ववेद की महिमा तथा सामान्य यज्ञों का इनमें वर्णन है।

आरण्यक

अरण्यों (वनों) में निवास करनेवाले ऋषियों द्वारा रचित वैदिक कर्मकाण्ड से पृथक् आरण्यकों का प्रतिपाद्य विषय प्राणविद्या एवं प्रतीकोपासना है। इनमें उन महान् आध्यात्मिक तत्त्वों का संकेत मिलता है जो उपनिषदों में पल्लवित हुए हैं।

ऋग्वेद के आरण्यकों में ऐतरेय एवं शाङ्खायन–आरण्यक हैं। शुक्ल यजुर्वेद की दोनों शाखाओं का बृहदारण्यक, कृष्ण यजुर्वेद के तैत्तिरीय एवं मैत्रयणी आरण्यक उपलब्ध होते हैं। सामवेद पर तलवकार तथा छान्दोग्य आरण्यक उपलब्ध हैं। अथर्ववेद का कोई आरण्यक उपलब्ध नहीं।

उपनिषद्

दार्शनिक विचारों के कारण उपनिषदों का सर्वाधिक महत्त्व है। ये आरण्यक रूपी पुष्प की सुगन्ध हैं। वेद का अन्तिम भाग होने के कारण इन्हें वेदान्त नाम से भी जाना जाता है। शङ्कराचार्य ने उपनिषद् को ***'ब्रह्मविद्या'*** कहा है, क्योंकि सभी उपनिषदों में ब्रह्म के स्वरूप को अभिव्यक्त करने का

प्रयास किया गया है। उपनिषद् का शाब्दिक अर्थ *'सत्र'* **(Session)** है। उपनिषद् शब्द की व्युत्पत्ति *उप* और *नि* उपसर्गक सद् धातु से हुई है। *'सद्'* का प्रयोग विशरण, गति या अवसादन इन तीन अर्थों में होता है। इस प्रकार अविद्या का विशरण (नाश), ब्रह्मविद्या की प्राप्ति तथा सांसारिक दुःखों का शिथिलीकरण उपनिषदों का प्रयोजन है। विभिन्न वैदिक शाखाओं को आधार बनाकर उपनिषदों का विभाग किया जाता है। ऋग्वेद से सम्बद्ध उपनिषद् ऐतरेय एवं कौषीतकि है। कठ, श्वेताश्वतर, मैत्रायणी तथा तैत्तिरीय कृष्ण यजुर्वेद की उपनिषदें हैं। ईश एवं बृहदारण्यक शुक्ल यजुर्वेद से सम्बद्ध हैं । सामवेद की दो उपनिषदें छान्दोग्य एवं केन हैं। अथर्ववेद के अन्तर्गत प्रश्न, मुण्डक एवं माण्डूक्योपनिषद् की गणना होती है।

उपनिषदों की शैली संवादपूर्ण है जिसके माध्यम से ब्रह्म, आत्मा, माया, जगत्, पुनर्जन्म इत्यादि दार्शनिक गुत्थियों को सुलझाने का प्रयास किया गया है। *'ईशावास्योपनिषद्'* सर्वाधिक प्राचीन एवं महत्त्वपूर्ण उपनिषद् है जिसके 18 मंत्रों में निष्काम कर्म, विद्या–अविद्या, सम्भूति–असम्भूति तथा ब्रह्म का स्वरूप वर्णित है। *कठोपनिषद्* में यम–नचिकेता संवाद द्वारा ब्रह्मविद्या का वर्णन है। छः खण्डों में विभक्त *'प्रश्नोपनिषद्'* में सुकेशा, सत्यकाम आदि छः प्रश्नकर्त्ता ऋषियों एवं महर्षि पिप्पलाद के बीच ब्रह्म–विद्या संबंधी संवाद है। *'मुण्डकोपनिषद्'* द्वैतवाद का प्रधान स्तम्भभूत–

''द्वा सुपर्णा सयुजा'' से संवलित है। अथर्ववेदीय 'माण्डूक्योपनिषद 12 वाक्यों में विभक्त अल्पकाय उपनिषद् है, जिसमें ओंकार की अत्यन्त मार्मिक व्याख्या प्रस्तुत है। *'छान्दोग्योपनिषद'* का महावाक्य, *'सर्व खल्विदं ब्रह्म'* अद्वैत वेदान्त का बीज रूप है। *'बृहदारण्यकोपनिषद'* महर्षि याज्ञवल्क्य की आध्यात्मिक शिक्षा से ओत–प्रोत है। ये दोनों विशालकाय हैं। *'श्वेताश्वतरोपनिषद'* शैव–धर्म का प्रतिपादक ग्रन्थ है। भक्तितत्त्व का प्रथमतः प्रतिपादन इस उपनिषद् की मुख्य विशेषता है।

वेदान्त–दर्शन का आधार उपनिषद् ही है, जिसके फलस्वरूप बादरायण ने *'ब्रह्मसूत्र'* की रचना की थी। शङ्कराचार्य ने 10 उपनिषदों पर भाष्य लिखकर अद्वैतवाद की स्थापना की।

वेदाङ्ग (800 ई पू० से प्रारम्भ)

अङ्ग शब्द का व्युत्पत्तिलभ्य अर्थ है 'उपकार करनेवाला' अर्थात् वेदों के वास्तविक अर्थ का भली भाँति दिग्दर्शन करनेवाला। वेदों के स्वरूप को जानने में उपयोगी शास्त्र 'वेदाङ्ग' कहे गये। वैदिक साहित्य का विस्तार होने पर तथा वैदिक मंत्रों में उच्चारण एवं अर्थ में कठिनाई होने पर लोगों ने लौकिक संस्कृत में वेदाङ्गों की रचना की। वेदाङ्ग छः हैं:–*शिक्षा, कल्प, व्याकरण, निरुक्त, छन्द* तथा *ज्योतिष*।

(1)शिक्षा– जिसके द्वारा हमें वैदिक मंत्रों के शुद्धातिशुद्ध उच्चारण का

ज्ञान होता है, उन्हें शिक्षा के नाम से जाना जाता है। कहते हैं– *''शिक्षा घ्राणं तु वेदस्य।''* वैदिक मंत्रों के शुद्ध उच्चारण के लिए उदात्त, अनुदात्त एवं स्वरित तीन स्वर – भेद किए गए हैं। प्रमुख शिक्षा–ग्रन्थों में पाणिनीय शिक्षा, याज्ञवल्क्य शिक्षा, नारायणीय शिक्षा आदि अनेक शिक्षा ग्रन्थों के नाम प्रसिद्ध हैं।

(2) कल्प – 'कल्प' वेद प्रतिपादित कर्मों का भली–भाँति विचार करनेवाला शास्त्र है– *''कल्प्यन्ते समर्थ्यन्ते यज्ञ–यागादिप्रयोगाः यत्र इति कल्पः।* 'अर्थात् यज्ञ यागादि विधानों, विवाह–उपनयन आदि कर्मों का प्रतिपादन जिन ग्रन्थों में किया गया है, उन सूत्र ग्रन्थों का नाम ''कल्प है। सूत्र शैली में निबद्ध होने के कारण इन्हें *'कल्पसूत्र'* भी कहा जाता है। विषय की दृष्टि से इन्हें चार श्रेणियों में विभक्त करते हैं: *1. श्रौतसूत्र, 2. गृह्यसूत्र, 3. धर्मसूत्र तथा 4. शुल्वसूत्र*। ये चारों विभिन्न वेदों के लिए पृथक्–पृथक हैं। ***श्रौतसूत्र*** का मुख्य प्रतिपाद्य विषय श्रुति–प्रतिपादित महत्त्वपूर्ण यज्ञों (दर्शपौर्णमास, चातुर्मास्य, सोमयाग, वाजपेय, राजसूय, अश्वमेध, इत्यादि) का क्रमबद्ध वर्णन है। अभी आश्वलायन तथा कौषीतकि (दोनों ऋग्वेद के), कात्यायन तथा पारस्कर (शुक्ल यजु0) भारद्वाज, आपस्तम्ब, वाराह, मानव, बौधायन (सभी कृष्ण यजु0) जैमिनीय (साम0), वैतान (अथर्व0) इत्यादि श्रौतसूत्र उपलब्ध हैं। गृह्यसूत्र के अन्तर्गत गृहाग्नि में सम्पूर्ण

होनेवाले पुंसवन, जातकर्म, नामकरण, गोदान, उपनयन, विवाह, अन्त्येष्टि इत्यादि विभिन्न लौकिक यागों का विवेचन है। गृह्यसूत्रों में ***आश्वलायन*** एवं ***पारस्कर*** सदृश गृह्यसूत्र प्रसिद्ध हैं। धर्मसूत्र में आचार, कर्त्तव्य, व्यवहार, राजधर्म, प्रायश्चित इत्यादि का विवेचन किया गया है, धर्मसूत्रों में ***बौधायन, आपस्तम्ब, हारीत, वशिष्ठ*** एवं ***गौतम धर्मसूत्र*** प्रसिद्ध हैं। भारतीय रेखागणितीय ऐतिहासिक जानकारी की दृष्टि से ***शुल्वसूत्र*** अत्यन्त उपादेय ग्रन्थ हैं। ये केवल यजुर्वेद पर ही प्राप्त होते हैं। शुल्व का अर्थ है–रज्जु (रस्सी) अर्थात रज्जु के द्वारा मापी गयी वेदी की रचना शुल्वसूत्र का प्रतिपाद्य विषय है।

(3) व्याकरण

'व्याकरण वह वेदाङ्ग है, जो पदों की प्रकृति तथा प्रत्यय का उपदेश देकर पदों के स्वरूप का परिचय कराता है । इसे वेदरूपी पुरुष का मुख स्वीकार किया गया है –***''मुखं व्याकरणंस्मृतम''*** सम्प्रति व्याकरण–वेदाङ्ग का प्रतिनिधित्व करनेवाला ग्रन्थ एकमात्र पाणिनीय व्याकरण है, जिसे अष्टाध्यायी के नाम से जानते हैं । इस ग्रन्थ पर अनेक वृत्तियाँ, भाष्य,वार्तिक टीकाएँ–प्रटीकाएँ लिखी जा चुकी हैं । भर्तृहरि रचित ***'वाक्यपदीय'*** दर्शनप्रधान व्याकरण शास्त्र के रूप में संस्कृत साहित्य की एक अमूल्य निधि है।

(4) *निरुक्त (800ई.पू.)*

निरुक्त *'निघण्टु'* (वैदिक शब्दों का लघुकाय संग्रह) की व्याख्या है जो यास्क द्वारा लिखित है । निरुक्त का अर्थ है वैदिक पदों की व्युत्पत्ति बतलाना । निरुक्त वैदिक मंत्रों के अर्थ को बताने में सहायक है । इसलिए यह अर्थविज्ञान का वेदाङ्ग है ।

(5) छन्द

छन्द पद्यात्मक मन्त्रों में अक्षर की संख्या बताकर खण्डों में व्यवस्था करता है । छन्दों का ज्ञान रहने पर ही मन्त्र–पाठ के समय उचित विराम हो सकता है । छन्द का प्रतिनिधि ग्रन्थ आचार्य पिङ्गलकृत *'छन्दःसूत्र'* है। वेदों में प्रयुक्त कुल 21 छन्द हैं । वैदिक छन्दों में अनुष्टुप्, त्रिष्टुप्, गायत्री, जगती आदि प्रमुख हैं ।

(6) ज्योतिष (1400 ई.पू. से 800ई.पू.)

यज्ञ का विधान विशिष्ट समय की अपेक्षा रखता है, तभी उसका फल मिलता है। मुहूर्त्त का निर्धारण ज्योतिष द्वारा ही होता है । आचार्य लगध कृत वेदाङ्गज्योतिष के दो प्रतिनिधि ग्रन्थ *''आर्चज्योतिष''* तथा *''याजुष ज्योतिष'* क्रमशः ऋग्वेद एवं यजुर्वेद से संबंधित हैं ।

वैदिक साहित्य के सम्यक् ज्ञान के लिए परवर्त्ती काल में परिशिष्ट ग्रन्थ भी लिखे गए । इन ग्रन्थों को *अनुक्रमणी* भी कहते हैं । प्रत्येक वेद

की अनुक्रमणी प्राप्त होती हैं । शौनक और कात्यायन अनुक्रमणी के नितान्त प्रख्यात आचार्य हैं । *'बृहद्देवता', 'ऋक्सर्वानुक्रमणी', 'छन्दोऽनुक्रमणी, ''आर्षानुक्रमणी*आदि महत्त्वपूर्ण परिशिष्ट ग्रन्थ हैं ।

प्रतिशाख्य–वेदाङ्ग में शिक्षा, व्याकरण तथा छन्द का संयुक्त प्रतिपादन करने वाले ग्रन्थ प्रतिशाख्य कहलाते हैं जो विविध वैदिक शाखाओं से सम्बद्ध होने से ऐसा कहे जाते हैं *–शाखां शाखां प्रति–प्रतिशाखम्, तत्र भवं प्रतिशाख्यम्*। अभी कई प्रातिशाख्य मिलते हैं जैसे–*ऋक्प्रातिशाख्य, तैत्तिरीय प्रातिशाख्य, वाजसनेयिप्रातिशाख्य, सामप्रातिशाख्य (सामतन्त्र, ऋक्तन्त्र* आदि) और *अथर्वप्रातिशाख्य* । इनकी व्याख्याएँ भी आगे चलकर की गईं ।

इस प्रकार वैदिक साहित्य का उत्तरोत्तर विकास होता रहा । प्रारम्भ में वैदिक संस्कृत का ही प्रयोग होता था किन्तु क्रमशः वैदिक संस्कृत का प्रचलन समाप्त होता गया एवं लौकिक संस्कृत में ही वैदिक साहित्य के रक्षणार्थ व्याख्या–ग्रन्थ लिखे जाने लगे ।

अभ्यास

1. वेद किसे कहते हैं ? वेद एवं संहिता में अन्तर स्पष्ट करें ।
2. ऋग्वेद के प्रमुख संवाद–सूक्तों का उल्लेख करें ।
3. ऋग्वेद की प्रमुख शाखाओं के नाम बताएँ ।
4. यजुर्वेद के प्रतिपाद्य विषयों का वर्णन करें ।
5. 'साम' का अर्थ स्पष्ट करते हुए सामवेद के वर्ण्य–विषयों का वर्णन करें।
6. ब्राह्मण–ग्रन्थों का प्रयोजन स्पष्ट करें ।
7. अथर्ववेद अन्य किन नामों से जाना जाता है, इसके वर्ण्य–विषय पर प्रकाश डालें ।
8. आरण्यकों की रचना कहाँ हुई ? इनकी रचना का उद्देश्य क्या है ?
9. उपनिषद् का अर्थ बताते हुए इसके वर्ण्य–विषय पर प्रकाश डालें ।
10. भारतीय दर्शनमें शंकराचार्य के योगदान का वर्णन करें।
11. 'वेदाङ्ग' किसे कहते हैं ? नामोल्लेख सहित उनके वर्ण्य–विषय दर्शाएँ।
12. निम्नलिखित पर टिप्पणी लिखें–

अनुक्रमणी, ब्रह्मसूत्र, वैदिक ऋषिकाएँ, संहिता, प्रातिशाख्य ।

वस्तुनिष्ठ–प्रश्न

1. निम्नलिखित रिक्त–स्थानों की पूर्ति उचित शब्दों द्वारा करें –

(i) संहिताओं की संख्या ————है ।

(ii) ऋग्वेद का विभाजन ————मण्डलों में हुआ है ।

(iii) ऋग्वेद में ————सूक्त एवं ऋचाएँ ——है ।

(iv) सामवेद के प्रमुख देवता ————हैं ।

(v) ब्रह्मवेद ————को कहते हैं ।

(vi) ब्राह्मणों में सबसे बड़ा ब्राह्मण है ।

(vii) ————प्राचीनतम उपनिषद है ।

(viii) वेदाङ्गों की संख्या ————है ।

(ix) चार वेद है – (i)..........(ii)............(iii).......(iv)......

(x) चार ऋत्विज् हैं–(i)......(ii).......(iii)..........(iv).......

2. निम्नलिखित पंक्तियों को सही शब्दों से पूर्ण करें –

(i) गद्यात्मक मन्त्र ————कहलाते है । (यजुः, साम, अथर्ववेद)

(ii) यज्ञ के विधिविधान का संपादन——करते हैं । (होता,उद्‌गाता, अध्वर्यु)

(iii) ब्रह्मा——अर्थात् सर्ववेद ज्ञाता होता है । (द्विवेदी, त्रिवेदी, चतुर्वेदी)

(iv) पूर्वार्चिक एवं उत्तरार्चिक------संहिता के विभाग हैं (ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद)

(v) शंकराचार्य ने उपनिषद् को ------विद्या कहा है । (ब्रह्म, आत्म, वन)

3. *स्तम्भ 'क' का स्तम्भ 'ख' से मेल करें ।*

	स्तम्भ 'क'		*स्तम्भ 'ख'*
1.	ब्रह्मसूत्र	क.	प्राचीन उपनिषद्
2.	सर्वं खल्विदं ब्रह्म	ख.	कल्प ग्रन्थ
3.	पाणिनीय–याज्ञवल्क्यशिक्षा	ग.	बादरायण
4.	गृह्य–धर्म–शुल्व सूत्र	घ.	छान्दोग्योपनिषद्
5.	ईशावास्योपनिषद्	ङ	शिक्षा ग्रन्थ